अध्याय अडतीसवाँ

॥श्री गणेशाय नम:॥ श्री सरस्वत्यै नम:॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नम:॥

"सिद्धारूढ़ महाराज सभी लोगों के लिए करुणानिधान हैं। उन्हीं का चिंतन करने से, दीनों के वे नाथ, संकट के समय, क्षण में प्रसन्न होकर मदद करते हैं।"
आदि तथा अंत न होने वाले, बाहरी जगत के परे होने वाले (अमर्याद), सारा विश्व व्याप्त किए हुए, माया के परे होने वाले, लोगों की रक्षा करने वाले, सब को नियंत्रित करने वाले तथा नाम और रूप के परे होने वाले, हे निर्विकार सतगुरुनाथजी, मेरा आपको शत शत प्रणाम हैं। आपको प्रणाम करने लगता हूँ तो आप स्वयं ही प्रणाम करने वाला हो जाते हैं, उसी प्रकार, प्रणाम तथा प्रणाम करने वाला भी आप ही हो जाते हैं। आपका ध्यान करने लगते है तो, जिसका ध्यान करते हैं वह ध्यान मूर्ति तथा ध्यान (चिंतन) ये दोनों भी आप ही हो जाते हैं; देहबुद्धि का विनाश करके इस प्रकार की एकरूपता आप ही निर्माण करते हैं| अन्य कोई उपासना किए बगैर केवल निरभिमानी होकर आपकी सेवा करके कृपा प्राप्त करने से आप ही ज्ञान प्रदान करते हैं। अन्य उपासनाएँ किसी न किसी प्रकार का बंधन निर्माण करती हैं, परंतु आप जैसे ज्ञानदाता ने प्रदान किए हुए ज्ञान के कारण व्दैत का बंधन पूर्ण रूप से नष्ट होता है। ऐसे हे सतगुरुनाथजी, आप की चरणों में सिर रखकर मैं आप को वंदन करता हूँ, मेरे मन में स्थित मोह-ममता का निवारण करके मेरे मन को शांति प्रदान कीजिए। श्रोतागण, जिसे केवल सुनने से भव बंधन टूटकर चित्त शुद्धि होकर ज्ञान प्राप्ति होती है, ऐसी यह जीवनी सुनिए।

कालप्पा बडिगेर नाम का एक निर्मल तथा स्नेहशील भक्त था। एक बार उसे लगा की सिद्धनाथजी को अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित करना चाहिए। बाज़ार जाकर उसने उत्तम रसदार आम खरीदकर घर में रखे और सिद्धाश्रम जाकर सिद्धारूढ़जी को भोजन के लिए आमंत्रित किया। दूसरे दिन खाना बनने के पश्चात कालप्पा मठ गया और सतगुरुजी से घर आने की प्रार्थना की। उसपर वह अपने साथ सतगुरुजी को लेकर घर आया, उन्हें सुंदर आसन पर बिठाकर उनकी प्रेम से पूजा की। उसके पश्चात उसने भोजन के लिए थाली रखकर उसमें विविध प्रकार के पदार्थ परोसे और आम काटे, परंतु एक विचित्र

घटना घटी। उसने काटे हुए हर आम में कीड़े दिखाई दिए, कीड़े देखकर कालप्पा मन ही मन दुखी हो गया और उसने कहा, "महाराज, मैं अभीं जाकर दूसरे आम खरीदकर लाता हूँ।" सतगुरुजी ने कहा, "अरे भाई, तुम बिलकुल चिंता मत करना। ला वे सारे आम, मुझे दे।" कहकर उन्होंने वे आम उससे ले लिए। एक आम हाथ में लेकर उसे चारो ओर से घुमाकर देखते हुए सिद्धजी ने कहा, "यह आम तो अच्छा है!" इस प्रकार उन्होंने सभी आम हाथ में लेकर देख लिए और बोले, "इन आमों में बिलकुल कीड़े नहीं हैं।" उस समय अन्य लोगों ने देखा तो उन्हें एक भी कीडा न दिखाई पड़ते हुए आम बिलकुल अच्छे दिखाई पड़े; उसपर आम खाकर देखे तो वे एक से एक मधुर थे। सभी लोग आश्चर्य से दंग रह गये। अगर निर्जिव आम सतगुरुजी के हाथ के स्पर्श से शुद्ध हो गये तो सजीवों में शुद्धता क्यों नहीं आयेगी? सतगुरुजी के हाथ के स्पर्श से सजीव तथा बुद्धिशाली मनुष्य अवश्य शुद्ध होता है। उसपर सतगुरुजी उसे अपने हृदय में स्थान देते हैं। जिस प्रकार, शुद्ध हुआ फल खाते ही, शरीर से एकरूप होने के पश्चात उस फल का नाम तथा रूप पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं; उसी प्रकार सतगुरुजी के स्पर्श से तत्काल भक्त का चित्त शुद्ध होता है, उसपर स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होने के उपरांत गुरुजी उसे स्वयं में एकरूप कर लेते है। अस्तु। कालप्पा अत्यंत आनंदित हुआ। सिद्धसतगुरुजी के चरण छूकर उसने कहा, "सतगुरुनाथ महाराज, आप मेरे घर पधारे और मेरा उद्धार हो गया।" उसके पश्चात उसने बीड़ा तथा दक्षिणा देकर उन्हें मठ तक पहुँचाया और कृतार्थ होकर वह घर लौटा।

तुकप्पा नाम का एक स्नेहशील भक्त था; वह हमेशा सतगुरुजी की सेवा में अगुआता था। एकबार नवरात्री के समारोह के चलते, सतगुरुजी की पूजा करने हेतु उसने उन्हें घर आमंत्रित किया। समारोह के लिए उसने घर के सामने एक सुंदर मंडप की रचना करवायी; उस मंडप में जडाऊ दिये दिव्य तेज से जल रहे थे। पूजा की पूरी तैयारी करके अब वह सतगुरुजी को बुलाकर ले आने वाला ही था की इतने में उसकी पत्नी उसके पास आकर बोली, "अजी सुनिए! आप सतगुरुजी की पूजा करने हेतु उन्हें घर बुलाकर ले तो आ रहे हैं, परंतु क्या हमारा पुत्र हनुमंत रोग से निश्चल होकर पड़ा हुआ आप को दिखाई नहीं पड़ता?

लगता है उसकी मृत्यु बिलकुल समीप है।" यह सुनकर तुकप्पा पुत्र के पास गया और उसने कहा, "बेटा! आज सतगुरु महाराज घर पधारने वाले हैं। वे जब आएँगे तब न कराहते हुए शांत होकर लेटे रहना। उनकी पूजा में किसी भी प्रकार का विघ्न हो ऐसा कुछ भी मत करना। आखिर मरने का समय आ ही गया तो सतगुरुजी का नाम लेकर प्राण त्याग देना। परंतु पूजा में विघ्न हो ऐसे शब्द मुँह से मत निकालना।" बेचारा हनुमंत! इशारे से ही उसने हाँ भर दी। परंतु यह दृश्य देखकर तुकप्पा की पत्नी फूट-फूटकर रोने लगी| उसे देखकर तुकप्पा ने कहा, "ये क्या है? बिछाने पर लेटा हुआ रोगी भी जब नहीं रो रहा है, तो इस प्रकार आक्रोश करना तुम्हें शोभा नहीं देता। अभी सतगुरुनाथ महाराज आते ही होंगे। अब मैं सतगुरुजी को बुलाकर लाऊँ या तुम्हारे साथ मिलकर आक्रोश करता रहूँ, तुम्ही ही बताओ।" उसपर पत्नी ने कहा, "अजी! गलती हुई मेरी! वह मर भी जाए, फिर भी मैं नहीं रोऊँगी। सतगुरुजी पूजा स्वीकार करके निकल जाने तक उसके मृत शरीर पर कंबल डालकर उसे ढक दूँगी।" अपने हृदय में स्थित ममता को निष्कासित करके पूजा विधि व्यवस्थित रूप से पूर्ण करने का मन ही मन निश्चय करके ही तुकप्पा मठ गया। बड़ी शानदार शोभायात्रा के साथ धूमधाम से वह सतगुरुजी को घर ले आया और मंडप में रखे सिंहासन पर उन्हें बिठाया। कीर्तन आरंभ हुआ परंतु इतने में एक अचरज हुआ। इधर कंबल ओढ़कर लेटा हुआ हनुमंत आँसू बहाते हुए सतगुरुजी का ध्यान करते हुए बोला, "हे सतगुरु दीनानाथजी, मुझे आप के दर्शन नहीं होंगे। क्योंकि इस बीमारी के कारण मैं उठकर बैठ भी नहीं सकता। मेरे प्राण जाने का समय आया है, इस समय आप के सिवाय मुझे बचाने वाला दूसरा कौन है? अगर मैं यहाँ से आप को आवाज दूँ तो पूजा में निश्चित ही विघ्न आएगा; इसलिए आप मुझ पर दया कीजिए। हे सतगुरुनाथजी, आप मुझ पर कृपा करके एकबार दर्शन दीजिए ताकि मैं चैन से प्राण त्याग सकूँ। बाहर इतने जोर जोर से आप की जयजयकार हो रही है की मेरे शब्द आप के कान तक पहुँचेंगे ही नहीं।" बाहर कीर्तन में रंग जम गया था। इतने में मंडप में बैठे हुए सतगुरुनाथजी तेजी से उठे और उन्होंने तुकप्पा को बुलाया। सतगुरुजी ने तुकप्पा का हाथ पकड़कर उन्हें हनुमंत के पास ले जाने के लिए कहा। तुकप्पा

ने कहा, "महाराज, फिलहाल उसके पास जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह शांति से सोया हुआ है। पूजा पूर्ण रूप से संपन्न होने के पश्चात मैं अवश्य आप को उसके पास ले जाऊँगा।" सतगुरुजी ने कहा, "तुकप्पा मुझे अभी इसी समय हनुमंत से मिलना है|" मजबूर होकर तुकप्पा सतगुरुजी का हाथ पकड़कर उन्हें हनुमंत के पास ले गया, उस समय सतगुरुजी ने हनुमंत पर अपनी दृष्टि फेरी। उसपर ओढाया हुआ कंबल एक ओर सरकाकर देखा तो उसके चेहरे पर मृत्यु की सूरति फैली थी और उसके मुख से अस्पष्ट रूप से नामोच्चारण सुनाई पड़ रहा था। उसे देखते ही "शिवाय नम:" मंत्र उच्चारते हुए सिद्धनाथजी ने उसके शरीर पर नखशिख से हाथ फेरा; उसी पल उसके चेहरे पर फैली मृत्यु की सूरति जाकर वहाँ तेज फैलने लगा, हाथ पाँव में जान आकर वे हिलने लगे। सिद्धारूढ़जी ने उसे हाथ पकड़कर उठाया और बिस्तर पर बिठाया, तत्क्षण उसके शरीर में सतगुरुकृपा से चेतना प्राप्त हो गयी। बिस्तर के पास खड़े हुए तुकप्पा के आँखों से अविरत आँसू बह रहे थे। उसकी पत्नी दौड़ती हुई चली आई और उसने सतगुरु कृपा से नया जीवन तथा आरोग्य प्राप्त किए हुए हनुमंत की ओर देखा। सतगुरुजी पर होने वाली भावभक्ति से हृदय भर आने के कारण उसने झट से उनके चरण छुए और कहा, "हे दयालु दीनोद्धारक, आज संकट के समय में आप ने हमारी मदद की। गुरुवर्य, आप की पादपूजा के ऐन मौके पर इस के प्राण चले जाएँगे तो पूजा में विघ्न उत्पन्न होगा इसी बात का हमें दुख हो रहा था; परंतु आप ने उसका निवारण किया। हे करुणानिधान, हम ने आप की प्रार्थना किए बगैर ही आप स्वयं दौड़कर चले आए और हमारे आसन्नमृत्यु पुत्र को कृपा करके बचा लिया।" उसपर तुकप्पा ने कहा, "सतगुरुनाथजी, हम जैसे मूर्खों को आप की महिमा का पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं होता, परंतु विनम्र होकर मैं आप से बिनती करता हूँ, जिसे आप सुन लीजिए। मेरा पुत्र हनुमंत आसन्नमृत्यु है यह बात न तो मैंने आप को बतायी थी न ही किसी दूसरे को, तो फिर आज यह बात अचानक आप को कैसे पता चल गयी, यह कृपा करके बताईए।" उसपर हँसकर सतगुरुनाथजी ने कहा, "अरे भाई! भक्तों की पीड़ा तथा दुख से दी हुई आवाज सुनने के लिए मेरे कान अत्यंत सतर्क रहते हैं। इसीलिए, इसने दयनीय होकर दी हुई आवाज सुनते ही मैं तत्काल यहाँ चला आया। अब

इसे मृत्यु से कोई भय नहीं, जल्द ही यह पूर्ण रूप से तंदुरुस्त हो जाएगा। इसका हाथ पकड़कर इसे पूजा के समय ले आओ।" ऐसा सतगुरुजी ने तुकप्पा से कहा और वे फिर से मंडप में जाकर बैठे। इतने में कीर्तन समाप्त हुआ और सभी भक्तगण सिद्धसतगुरुजी की पूजा के लिए तैयार हो गए। हनुमंत का हाथ पकड़कर उसे लेकर बड़े हर्ष से तुकप्पा मंडप में आया; दूर से ही सतगुरुजी को देखकर हनुमंत तुकप्पा का हाथ छोड़कर उनकी ओर दौड़ता हुआ चला गया। सिद्धजी के चरण छूकर हनुमंत ने कहा, "हे दीनदयालु सतगुरु महाराज, आप मेरी प्रार्थना सुनकर मेरी रक्षा करने के लिए दौड़कर आए। मैंने यह मेरा शरीर आप पर न्यौछावर कर दिया है। आप के सिवाय मेरा अन्य कोई भी न होने के कारण, मरते दम तक मेरा यह शरीर मैंने आप के चरणों में अर्पण किया है, क्योंकि आप ही मेरे मालिक हैं।" सतगुरुजी ने उसे उठाकर गले लगाया और कहा, "हे बालक! तुम्हारी भक्ति तथा प्रेम देखकर मैं रीझ गया हूँ। मुझे तुम्हारे जैसे सभी भक्त चाहिए, तुम तुम्हारे माता पिता की जगह मुझे मानकर उनकी निर्मल मन से सेवा करते रहो।" सतगुरुजी की ये बाते सुनकर तुकप्पा के आँखों से झरझर आँसू बहने लगे; झट से उसने सतगुरुजी के चरण छू लिए। चारो ओर प्रेम रस फैल गया। तुकप्पा, जो सभी भक्तों में प्रमुख था, उसे गुरुजी के चरणों में लीन हुआ देखकर सभी भक्तगणों को अच्छा लग रहा था। सतगुरुप्रेम यही उसका गौरव होने के कारण उसे गुरु के बिना अन्य सभी वस्तुएँ व्यर्थ लगती थी। नतीजा यह हुआ की उसके मन में कठोर वैराग्य की भावना जागृत होने के कारण वह लँगोटे के सिवाय अन्य कुछ भी धारण नहीं करता था। तुकप्पा आगे बढ़ा और सतगुरुजी की पूजा आरंभ करने के लिए उसने सिद्धारूढ़जी के सामने हुआ परदा खींचकर पूजा विधि आरंभ किया। उन्हें सभी वस्त्रालंकारों से सुशोभित करने के पश्चात परदा हटाते ही, आसन पर बैठे हुए सतगुरुजी ऐसे शोभायमान दिख रहे थे, जैसे बरसात की रात दमकने वाली बिजली कौंध उठी हो| उनके सिरका जड़ाऊ सोने का मुकुट दिव्य प्रभा से चमक रहा था; उस मुकुट पर सोने का नाग शोभायमान लग रहा था। उनके चेहरे पर सूर्य के समान प्रभा फैली थी; बिजली के समान सतगुरुजी की मूर्ति भक्तों के सामने चमक रही थी। उनके गले में सोने का नाग के समान बनाया हुआ हार

था और पाँव तक फूलों की मालाएँ शोभायमान हो रही थी; उनके कंधे पर पहनाए रेशम के वस्त्र में सोने की मुहर थी। छाती पर रत्नपदक तथा गले में मोतियों की मालाएँ और पाँव में चमकने वाली पादुकाएँ शोभायमान हो रही थी। इस प्रकार अलंकृत किए सिद्धनाथजी शोभान्वित लग रहे थे। भक्तगण एक साथ मिलकर जयजयकार कर रहे थे; कोई मंगल गीत गा रहे थे तो कोई सतगुरुजी की आरती उतार रहे थे। हनुमंत पूजा के समय हर्ष से नाच रहा था, उसके शरीर में मानो अद्‌भुत शक्ति का संचार हुआ था, जिसे देखकर सभी लोग आश्चर्य से दंग होकर कह रहे थे की सतगुरुजी की लीला अगाध है। पूजा समाप्त होने के पश्चात सतगुरुजी का हाथ पकड़कर तुकप्पा उन्हें भोजन के लिए ले गया। जैसे आकाश में तारकाओं के बीच चंद्ररेखा शोभान्वित होती है, उसी प्रकार भक्तगणों के बीच भोजन करने वाले सतगुरुनाथजी शोभान्वित हो रहे थे। जैसे ही भक्त प्रसाद के लिए सतगुरुजी के पास आते, सतगुरुनाथजी हर एक के मुख में भोजन का एक एक निवाला देते थे। इस प्रकार आनंदित होकर सभी भक्तगण प्रेम पूर्वक भोजन करने लगे। सभी का भोजन समाप्त होने के पश्चात भक्तों के सुख से सुखी हुए सतगुरुनाथजी सवारी में बैठकर वापस मठ चले गए।

अब इस कथा का लक्ष्यार्थ सुनिए। भक्त तुकप्पा को सद्‌भाव समझें और उसकी पत्नी को सद्‌भक्ति समझें, उनके पुत्र को ज्ञान समझें। सद्‌भाव तथा सद्‌भक्ति घरगृहस्थी चलाते समय उनके ज्ञान पुत्र को माया-मोह का आवरण रूपी रोग लगा। इसलिए, अब सतगुरुजी की पूजा करनी चाहिए ऐसा सद्‌भाव ने कहा। अंतरंग (हृदय) में सतगुरुजी के प्रवेश करते ही ज्ञान पुत्र सचेतन हुआ (होश में आया), चारो ओर हर्ष हुआ। उसके पश्चात सतगुरुजी की षोड़शोपचारों से पूजा की। सिद्धसतगुरुजी दयाघन होकर हमेशा भक्तगणों की मदद करने हेतु चौकन्ने रहते हैं; उन्हें दीन लोगों की चिंता होने के कारण, वे ऐसे लोगों की बिन बताए सहायता करते हैं। श्रोतागण, अब अगले अध्याय में बयान की हुई रसपूर्ण कहानी सुनने के लिए सतर्क हो जाईए, जिससे भव बंधन टूटकर स्वरूपज्ञान प्राप्त होता है। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह अडतीसवाँ अध्याय श्री

शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥